घोषणा-पत्र

मैं **सुनीता कुमारी थापा**, एम. फिल. नाट्य कला एवं फिल्म अध्ययन विभाग, सृजन विध्यापीठ, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय की नियमित छात्रा, यह घोषणा करती हूँ कि, **"हिंदी के पुरुष नाटककारों के नाटक में नारीवादी चेतना (नाटक –ध्रुवस्वामिनी, आधे-अधूरे, सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक और माधवी)"**, लघु शोध प्रबंध मेरे द्वारा संग्रहित तथ्यों पर आधारित है तथा यह मेरा मौलिक कार्य है। मेरी जानकारी एवं विश्वास में उक्त विषय इस विश्वविद्यालय में या और किसी अन्य संस्थान में किसी उपाधि हेतु प्रस्तुत नहीं किया गया है। यह लघु शोध प्रबंध मैंने सहायक प्रोफेसर (डॉ.) विधु खरे दास के निर्देशन और मार्गदर्शन में पूरा किया है।

मैं घोषणा करती हूँ, कि इस लघु शोध प्रबंध को पूरा करने में मैंने विश्वविद्यालय के शोध सम्बंधित सभी नियमों का पालन किया है।

सुनीता कुमारी थापा

स्थान : **हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा**

दिनांक :01/04/2013

एम. फिल.

(नाट्य कला एवं फिल्म अध्ययन विभाग)

ना. क्र.-201/02/204/004

ज्ञान शांति मैत्री

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

(A Central University established by Parliament by Act No. 3 of 1997)

प्रो. सुरेश शर्मा

विभागाध्यक्ष

नाट्यकला एवं फिल्म अध्ययन विभाग

दिनांक :

प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि सुश्री सुनीता थापा ने डॉ. विधु खरे दास के निर्देशन में **'हिंदी के पुरूष नाटककारों के नाटकों में नारीवादी चेतना(नाटक-ध्रुवस्वामिनी, आधे-अधूरे, सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक और माधवी)'** विषय पर अपना लघु शोध प्रबंध कार्य पूरा किया है। यह लघु शोध प्रबंध सृजन विद्यापीठ के नाट्यकला एवं फिल्म अध्ययन विभाग के एम.फिल. की उपाधि हेतु सत्र : 2012-13 के लिए जमा किया गया है।

मैं इस लघु शोध प्रबंध को मूल्यांकन हेतु सहर्ष अग्रसारित करता हूं।

(प्रो. सुरेश शर्मा)

ज्ञान शांति मैत्री

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997, क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

(A Central University established by Parliament by Act No. 3 of 1997)

डॉ. विधु खरे दास

सहायक प्रोफेसर

नाट्यकला एवं फिल्म अध्ययन विभाग

दिनांक :

प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि सुश्री सुनीता थापा ने मेरे निर्देशन में **'हिंदी के पुरूष नाटककारों के नाटकों में नारीवादी चेतना(नाटक-ध्रुवस्वामिनी, आधे-अधूरे, सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक और माधवी)'** विषय पर अपना लघु शोध प्रबंध कार्य पूरा किया है। यह लघु शोध प्रबंध सृजन विद्यापीठ के नाट्यकला एवं फिल्म अध्ययन विभाग के एम.फिल. की उपाधि हेतु सत्र : 2012-13 के लिए जमा किया गया है। यह कार्य पूर्णत: मौलिक एवं स्वतंत्र है और इसे अन्य किसी भी उपाधि के लिए नहीं प्रस्तुत किया गया है।

(डॉ. विधु खरे दास)

आभार

आभार बहुत छोटा सा शब्द है ,अम्मा-बाबूजी के आशीर्वाद के आगे, फिर भी सर्वप्रथम मैं अपने अम्मा-बाबूजी का सहृदय आभार व्यक्त करती हूँ , जिनके आशीर्ववाद और सहयोग से मैं यहाँ तक पहुंची। मैं अपने परिवार के अन्य सभी सदस्यों का भी आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने सदैव मेरा उत्साहवर्धन किया।

मैं अपनी शोध निर्देशिक सहायक प्रोफेसर डॉ॰ विधु खरे दास जी का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ , जिन्होंने इस विषय में कार्य करने के दौरान लगातार मेरा मार्गदर्शन किया और मेरी हर मुश्किल को समझते हुए लगातार मुझे हिम्मत दी और विषय से संबन्धित पुस्तकें उपलब्ध करवाई। साथ ही विषय से संबन्धित हर पहलुओं पर चर्चा की ताकि इस विषय पर मेरी पकड़ हो सके और मैं विषय को गहराई से समझ सकूँ।

मैं अपने विभाग नाट्यकला एवं फिल्म अध्ययन विभाग के विभागाध्यक्ष प्रो॰ सुरेश शर्मा जी का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने इस विषय पर मुझे कार्य करने का अवसर प्रदान किया।

मैं अपने विभाग के सहायक प्रो॰ सतीश पावड़े जी, एसोसिएट प्रोफेसर डॉ॰ ओमप्रकाश भारती जी, डॉ॰ रयाज़ हसन जी, श्री अखिलेश दीक्षित जी तथा विभाग के सभी सदस्यों के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने मेरी हर संभव मदद की।

मैं डॉ॰ अनुपम आनंद जी का भी धन्यवाद देना चाहती हूँ, जिन्होंने इस विषय से संबन्धित महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान की।

मनीष, अरविंद, नीरज जो मेरे दोस्त भी हैं, सहपाठी और छोटे भाई भी है, इन्हें धन्यवाद देना महज़ एक औपचारिकत ही है, दोस्तों बस यूँ ही हमेशा साथ रहना। तुम तीनों का हृदय से आभार, तुम तीनों के बिना यह कार्य संभव न हो पता।

मैं गौरव मिश्रा, अश्विनी कु.सिंह और राहुल को धन्यवाद देती हूँ, जिन्होंने कठिन परिस्थितियों में मेरी सहायता की साथ ही शोध को पूर्ण करने में मेरी मदद की।

मैं आभारी हूँ अपनी सभी सहपाठियों की व दोस्तों तृप्ति, अर्चना, अंजलि, मेघा, आरती, सुषमा और अनीता की, जिन्होंने मेरे शोध कार्य में मेरी मदद की।

मैं अपने प्रिय समीर का आभार व्यक्त करती हूँ , जो जीवन के हर मोड़ में और हर मुश्किल घड़ी में मेरा साथ देते हैं।

अंत में मैं उन सभी को धन्यवाद देना चाहती हूँ, जो हमेशा मुझसे मेरे शोध कार्य के बारे में पूछते रहते और मुझे हिम्मत देते रहते। आप सभी को सहृदय आभार ।

अनुक्रमणिका

भूमिका **i-viii**

अध्याय-प्रथम

1.हिंदी नाट्यलेखन में स्त्री की भूमिका **1-20**

1.1 हिंदी नाटकों का अभ्युदय 2-5

1.2.आधुनिक युग 6-20

अध्याय-द्वितीय

2. नारीवादी दृष्टिकोण **21-33**

अध्याय-तृतीय

3.चयनित नाटकों की कथावस्तु **34-47**

3.1. ध्रुवास्वामिनी 35-37

3.2. आधे-अधूरे 38-42

3.3. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक 43-44

3.4. माधवी 45-47

अध्याय-चतुर्थ

4. नाटककारों का संक्षिप्त परिचय **48-58**

4.1. जयशंकर प्रसाद 49-50

4.2. मोहन राकेश 51-53

4.3. सुरेन्द्र वर्मा 54-55

4.4. भीष्म साहनी 56-58

अध्याय-पंचम

5. चयनित नाटकों में नारीवादी चेतना और उनका तुलनात्मक अध्ययन **59-119**

5.1. ध्रुवास्वामिनी 60-73

5.2. आधे-अधूरे 74-86

5.3. सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक 87-97

5.4. माधवी 98-112

5.5. तुलनात्मक अध्ययन 113-119

उपसंहार **120-124**

परिशिष्ट

संदर्भ सूची **125-129**

भूमिका :-

आधुनिक काल में स्त्री मुक्ति के सवालों को बुद्धिजीवी वर्ग ने गंभीरता से लिया और साहित्य के केंद्र में स्त्री मुक्ति के सवालों को रखा। बीसवीं सदी के अंतिम दशक में आकर साहित्य में स्त्री-विमर्श के आने से सम्पूर्ण साहित्य को नारीवादी दृष्टिकोण से देखा जाने लगा जिससे

साहित्य की एक नयी दृष्टि सामने आयी। जिसमें साहित्यकारों की स्त्री दृष्टि को लेकर सवाल होने लगे। इस लघु शोध-प्रबंध में जयशंकर प्रसाद कृत 'ध्रुवस्वामिनी', मोहन राकेश कृत 'आधे-अधूरे', सुरेन्द्र वर्मा कृत 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' और भीष्म साहनी कृत 'माधवी' नाटकों को नारीवादी दृष्टिकोण से देखते हुए इसका समग्र अध्ययन किया गया है।

मानव सभ्यता के विकास में नारी के महत्व को विश्व भर में माना गया है। जिसके बिना विकास की कल्पना नहीं की जा सकती चाहे वह किसी भी प्रकार का हो। भारत की संस्कृति बहुत प्राचीन है। इस संस्कृति के अपने संस्कार, अपनी विशिष्टता है, जिनके बीच पले-बढ़े मनुष्य में नारी की अपनी अलग महत्वता है। वैदिक काल में स्त्री का सम्मान जनक दर्जा था। ज्ञान के क्षेत्र में भी स्त्रियां दखल रखती थी साथ ही स्त्री-पुरुष के बीच समानता का काल था। 'सरस्वती' में विद्या का आदर्श है तो धन का 'लक्ष्मी' में, शक्ति का रूप 'दुर्गा' है, तो सौंदर्य का 'रति' और पवित्रता का 'गंगा' में। इतना ही नहीं सर्वव्यापी ईश्वर को भी 'जगतजननी' कहके सुशोभित किया गया है। वैदिक युग में चाहे घर हो, बाहर हो या समाज हर जगह नारी की स्थिति सम्मान जनक थी। शिक्षा में भी वह बहुत आगे थी। यजुर्वेद में उसे 'सोम पृष्ठा' कहा गया है। ऋषि काल में वेद मंत्रों का अर्थ बताने वाली स्त्री थी इनमें लोपामुद्रा, रोमशा, विश्ववारा, अपाला, श्रद्धा, यमी, शरमा, घोशा आदि वेद मंत्रों की ज्ञाता थीं। बालिकाओं व बालक दोनों के लिए शिक्षा ग्रहण करना आवश्यक था। बाल विवाह की प्रथा भी नहीं थी। आत्मिक विकास, अध्यात्मिक ज्ञान के साथ-साथ धार्मिक क्षेत्र में भी स्त्री पुरुषों के साथ विचरण करती थी, उसका अधिकार होता था। इस काल में स्त्री को संजीवनी शक्ति कहा गया है जो हिन्दू जाति के अंदर जीवन संचार करती थी। स्वयं ब्रम्हा ने स्वीकारा है की देवी इस ब्रह्माण्ड को धारण करती है।

"अतुलम तत्र तत्तेजा: सर्वदेवशरीरजम

एकस्थम तदभून्नरी व्याप्तलोकत्रयम विषा''[1]

उत्तरवैदिक काल में शास्त्रों और ब्राह्मणवाद की नीतियों ने स्त्रियों के आर्थिक, धार्मिक अधिकार छीनकर उसे पुरुषों के अधीन बना दिया। स्त्रियों की दशा दयनीय और निम्न कोटि की होती चली गयी, जब हिन्दू समाज के ग्रन्थों और धार्मिक कर्मकांडों ने स्त्री की स्वतन्त्रता और अधिकारों की डोर पुरषों के हाथ में दे दी। इसी ब्राह्मणवादी नीतियों और धार्मिक कर्मकांडों के विरुद्ध बौद्ध और जैन धर्म का जन्म हुआ इस काल में स्त्री के वे सारे अधिकार,जो उससे छीन लिए गए थे उसमें सुधार आया। स्त्री को शिक्षा का, अपने पति को चुनने का और धार्मिक कार्यों में भाग लेने का अधिकार बौद्ध व जैन धर्म में मिला, जिसका उदाहरण हमें बौद्ध भिक्षुणियों द्वारा रचित 'थेरी गाथाओं' की उपस्तिथि से मिलता है। *''मध्य काल में भी अगाध पण्डिता स्त्रियों के दृष्टांत पाए जाते हैं। जिस समय शंकराचार्य ने अपने समय के प्रकाण्ड मण्डनमिश्र को परास्त कर दिया उस समय उसकी स्त्री विद्याधरी ने शंकराचार्य को परास्त किया। यह युग स्त्रियों का 'स्वर्णिम युग' कहें तो गलत न होगा। एक विद्वान ने तो यहाँ तक कह दिया कि यदि किसी देश के सांस्कृतिक स्तर का पता लगाना है तो पहले यह देखो की वहाँ की स्त्रियों की अवस्था कैसी है? इस सत्य का मनु ने कुछ इस तरह प्रमाण दिया है :-*

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता: ''[2]

पर मध्यकाल में मुगलों के आक्रमण के फलस्वरूप इस्लाम धर्म के आ जाने के कारण स्त्रियों की स्थिति दयनीय हो गयी जब पर्दा प्रथा, सती प्रथा, बाल-विवाह और देवदासी प्रथा ने उनके पैरों में गुलामी की बेड़ी डाल दी। यह स्थिति ब्रिटिश काल में भी बनी रही, पुरुषों ने जैसे

[1] . शुक्ल,उमा.भारतीय नारी अस्मिता की पहचान.इलाहाबाद:लोक भारती.पृष्ठ सं.13

[2] . शुक्ल,उमा.भारतीय नारी अस्मिता की पहचान.इलाहाबाद:लोक भारती.पृष्ठ सं.13-14

चाहा वैसे उसका उपयोग किया। किन्तु आधुनिक काल में भी स्त्री की स्थिति दयनीय व शोचनीय है। 18वीं सदी में राजा राम मोहन राय ने सती प्रथा के विरुद्ध एक शशक्त आंदोलन छेड़ा और बाल-विवाह, बेमेंल विवाह का विरोध किया तथा विधवा विवाह के समर्थन में आवाज़ उठायी। समाज के बदलते परिदृश्य में नारी को ही अधिक शोषण, उत्पीड़न व उपेक्षा का सामना करना पड़ा जिसका प्रभाव साहित्य में भी देखने को मिला। अतः पुनर्जागरण या आधुनिक काल पिछली सारी कुरीतियों, धार्मिक अंधविश्वासों के विरुद्ध एक इंकलाब लेकर आया। पश्चिम से आई नारीवादी चेतना ने भारत में एक नए विमर्श को जन्म दिया। जिसके तहत स्त्री अधिकारों पर ज़ोर दिया गया। नारीवादी आंदोलन के फलस्वरूप महिलाओं की स्थिति में काफी हद तक सुधार आए किन्तु समस्याएँ खत्म नहीं हुई हैं।

बदलते समय के साथ नाट्य लेखन में भी इन समस्याओं को जगह दी गई, पर जिस तेज़ी से स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन आया है, क्या उस तेजी से नाटकों में यह शामिल हुआ है? यह नाट्य लेखन और रंगमंच के लिए एक बड़ा सवाल है। विद्वान साहित्य को समाज का दर्पण मानते हैं और नाटक भी साहित्य की श्रेणी में ऐसा ही एक माध्यम है जो मंच पर जाकर पूर्ण होता है। अतः नाटकों में सामाजिक स्थितियों का प्रतिबिंब शुरू से ही रहा है। हिंदी नाटकों का आरंभ भारतेंदु काल से माना जाता है। भारतेंदु ने हिंदी नाटकों को एक नई शैली देने में पर्याप्त योगदान दिया था। सफल रंग आंदोलन, बहुलतापूर्ण नाट्य लेखन और प्राचीन तथा नवीन नाट्य शैलियों को ध्यान में रखा। और उन्होंने स्त्री चेतना अर्थात स्त्री की समस्याओं पर आधारित नाटकों की रचना की। अधिकांश संस्कृत व हिंदी नाटकों में स्त्री को वस्तु, भोग्या, अबला, शोषिता तथा पुरूषों पर आश्रित ही दिखाया गया है। उदाहरण स्वरूप– स्वप्नवासदत्ता, उत्तररामचरित्र, अभिज्ञानशाकुंतल, ध्रुवस्वामिनी, आषाढ़ का एक दिन, आधे–अधूरे, लहरों के राजहंस, सूर्य की

पहली किरण से सूर्य की अंतिम किरण तक, माधवी आदि। इसके अतिरिक्त इला, देवयानी का कहना है, कर्फ़्यू, हवाओं का विद्रोह, मुक्ति का रहस्य आदि नाटकों की फेहरिस्त हमारे सम्मुख है, जिनमें स्त्रियों की स्थिति विचारनीय है जो नारीवादी चेतना को उजागर करता है।

उपरोक्त नाटकों में स्त्रियों की स्थिति को देखा जाये तो 'सीमोन-द–बोउआर'' का यह कथन तर्कसंगत लगता है कि 'स्त्री पैदा नहीं होती, बना दी जाती है।' हमारा पितृसत्तात्मक समाज सदियों से ही स्त्री अस्मिता व स्त्री के अस्तित्व पर सवाल खड़ा करता रहा है। मेरे प्रस्तावित लघु शोध का विषय भी इसी से संबंधित है, 'हिंदी के नाटककारों के नाटक में नारीवादी चेतना(नाटक–ध्रुवस्वामिनी, आधे-अधूरे, सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक और माधवी)।'

प्रस्तुत शोध विषय को पाँच अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय 'हिंदी नाट्यलेखन में स्त्री की भूमिका' जिसके अंतर्गत दो उप अध्याय बनाए गए हैं, पहला है 'हिंदी नाटकों का अभ्युदय' जिसमें हिंदी नाटकों के उदय काल को संक्षिप्त में जानने और उस समय के नाटकों में नारी चरित्रों की भूमिका में स्त्री चेतना दिखाई देती है या नहीं, इसे संक्षिप्त में बताने का प्रयास किया गया है। इसके पश्चात दूसरे उप अध्याय में भारतेन्दु से वर्तमान समय के नाटकों और नाटककारों तथा उनकी रचनाओं का विवरण नारीवादी चेतना के संदर्भ में बताने का प्रयास किया गया है।

द्वितीय अध्याय 'नारीवादी दृष्टिकोण' में नारीवादी और नारीवादी आन्दोलनों को संक्षिप्त में बताते हुये भारतीय समाज में स्त्रियों की भागीदारी और समस्याओं को संक्षेप में बताने अभ्यास किया गया है।

तृतीय अध्याय है 'चयनित नाटकों की कथावस्तु' जैसा की नाम से ही ज्ञात होता है कि लघु शोध विषय से संबन्धित चयनित नाटकों की कथावस्तु को इस अध्याय में संक्षेप में बताया गया है।

चतुर्थ अध्याय 'नाटककारों का संक्षिप्त परिचय' इस अध्याय के अंतर्गत लघु शोध विषय में चयनित नाटकों के लेखकों का संक्षेप में परिचय दिया गया है।

पंचम अध्याय 'चयनित नाटकों में नारीवादी चेतना और उनका तुलनात्मक अध्ययन' जिसमें दो उप अध्याय हैं पहला है 'नाटकों में नारीवादी चेतना' इसके अंतर्गत नाटकों का नारीवादी दृष्टिकोण से समग्र अध्ययन करने का प्रयास किया गया है। और दूसरा उप अध्याय है 'नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन' इसमें चयनित नाटकों की आपस में तुलना नारीवादी दृष्टिकोण से करने का अभ्यास किया गया है।

अंत में मैं इस लघु शोध विषय का अध्ययन का उपसंहार प्रस्तुत कर रही हूँ।

शोध प्रविधि :-

इस लघु शोध कार्य में वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक तथा तुलनात्मक विधि का सहारा लिया गया है। प्रश्नावली भी तैयार किया गया है, जिसे परिशिष्ट दिया गया है।

संभावना :-

इस विषय के अंतर्गत शोध की कई समभावनाएँ बन सकती हैं जैसे, स्त्री विमर्श के तौर पर पुरूष नाटककारों और स्त्री नाटककारों के नाट्य लेखन, शिल्प विधान और भाषायी तौर पर एक महत्वपूर्ण शोध प्रबंध बन सकता है, साथ ही स्त्री लेखिकाओं की मानसिकता पर भी कुछ बातें हो सकती हैं क्योंकि स्त्री लेखिकाएँ भी कहीं न कहीं पुरूष मानसिकता की शिकार होती हैं और जाने अनजाने वे एक मुकम्मल स्त्री पक्ष की बात नहीं कर पाती हैं या कह लीजिये की नहीं हो पाती है। इसके अतिरिक्त स्त्री व पुरूष नाटककारों के नाटकों का तुलनात्मक अध्ययन भी किया जा सकता है और चयनित नाटकों की विभिन्न प्रस्तुतियों की विडियो रिकॉर्डिंग व प्रस्तुतियों के आधार पर भी एक प्रभावी शोध किया जा सकता है। ऐसे कई सवाल शोध के दौरान उठते रहे, इन सवालों से जूझते विषय इस लघु शोध प्रबंध के विषय से तैयार हो सकते हैं ।

उद्देश्य

वर्तमान समय में जहां एक ओर स्त्री को स्वतन्त्रता मिली है वहीं दूसरी ओर उसका शोषण करने में हमारे समाज ने कोई कसर नहीं छोड़ी। नारीवाद स्त्री शोषण के खिलाफ उसे मनुष्य के रूप में देखने समझने व उसके अधिकारों के लिए एक मुहिम है जो पश्चिम की देन है। आज पूरे विश्व का यह एक ज्वलंत मुद्दा बना हुआ है, जिस पर पिछले कई वर्षों से विचार विमर्श चलता आ रहा है, जो नाटकों में भी भलीभांति दृष्टव्य है।

वेद-पुराण, ग्रंथ, उपन्यास, कविता, कहानी, नाटक इत्यादि जो कुछ भी लिखा गया है या लिखा जा रहा है वह पुरूष मानसिकता के तहत पितृ सत्तात्मक समाज के पक्षधर ही लगते हैं। जिस तरह दलित-विमर्श दलितों द्वारा लिखा गया है और दलित–विमर्श में स्वानुभूति व सहानुभूति का सवाल बार-बार उभर कर सामने आता है ऐसी ही स्थिति स्त्री-विमर्श में भी उभर

कर आती है। शोषित जब स्वयं अपने शोषण की बात करता है या लिखता है तो सही मायने में वह विमर्श उभर कर आता है। इसी तरह नारीवादी भी यह मानते हैं की स्त्री समस्याओं पर जब एक स्त्री बात करेगी या लिखेगी तब वह स्त्री-विमर्श होगा। क्योंकि स्त्री पर होने वाले शोषण का जो असर स्त्री के मन मस्तिष्क पर पड़ता है उस मनःस्थिति को, उस पीड़ा को एक पुरूष महसूस नहीं कर सकता।

नारीवाद ये मान कर चलता है की स्त्री के पक्ष में जितनी भी रचनाएँ या विचार पुरूषों द्वारा लिखे गए या लिखे जा रहे हैं वह पूर्वाग्रह से ग्रसित हैं या रहते हैं। जब एक पुरूष नाटककार स्त्री विमर्श के विषय पर आधारित नाटक लिखता है तो वह कितना स्त्री के पक्ष में होता है और उसके साथ कितना न्याय करता है? क्या स्त्री की समस्याओं को उसी संवेदना के साथ प्रस्तुत कर पता है, जिस तरह एक स्त्री कर सकती है। यदि करता भी है तो उसका अंतिम रूप क्या होता है? ऐसे तमाम सवाल के जवाब ढूँढने के उद्देश्य हेतु प्रस्तावित शोध विषय चयनित किया है।

परिकल्पना

आधुनिक समय में स्त्रियों की स्थिति में खासा सुधार नही आया है। आज भी स्त्री उपभोग की वस्तु, संपत्ति, नुमाइश की चीज़ और शोषिता ही हैं, जो चयनित नाटकों में भी अंकित है।

कला समाज का आईना होती है। नाटक समाज को प्रभावित करने का एक सशक्त माध्यम माना जाता है पर मुझे ऐसा नहीं लगता इसके प्रभाव केवल किताबों में सिमट कर रह जाते हैं। आज कला मनोरंजन का साधन मात्र बनकर रह गयी है।

रंगमच के क्षेत्र में भी स्त्रियों की स्थिति सोचनीय है जहां की स्त्री-पुरुष को एक समान समझा जाता है पर वह व्यवहार में नाममात्र या न के बराबर ही है। आए दिन उन्हें भी पुरुषों के शोषण का शिकार होना पड़ता है।